Chapter अट्ठावन

श्रीकृष्ण का पाँच राजकुमारियों से विवाह

इस अध्याय में बतलाया गया है कि भगवान् कृष्ण ने किस तरह कालिन्दी इत्यादि पाँच राजकुमारियों से विवाह किया और फिर पाण्डवों से मिलने इन्द्रप्रस्थ गये।

जब पाँचों पाण्डव अपना अज्ञातवास पूरा कर चुके तो भगवान् कृष्ण सात्यकि इत्यादि यदुओं के साथ उन्हें मिलने इन्द्रप्रस्थ गये। पाण्डवों ने भगवान् का सत्कार किया और बड़े ही आनन्द से उनका आलिंगन किया। पाण्डवों की नवविवाहिता पत्नी द्रौपदी लजाती हुई कृष्ण के पास आई और उसने उन्हें नमस्कार किया। तब पाण्डवों ने सात्यकि तथा भगवान् के अन्य संगियों को आसन प्रदान किया और समुचित रीति से स्वागत-सत्कार किया।

भगवान् कृष्ण महारानी कुन्ती से भेंट करने गये। उन्होंने उन्हें प्रणाम किया। उसके बाद दोनों ने एक-दूसरे से उनके कुटुम्बियों के बारे में पूछताछ की। कुन्तीदेवी ने अपने तथा अपने पुत्रों के ऊपर दुर्योधन द्वारा ढाई जाने वाली विविध विपत्तियों को बतलाया और कहा कि कृष्ण ही उनके एकमात्र रक्षक हैं। उन्होंने कहा, ''आप सारे ब्रह्माण्ड के शुभचिन्तक हैं और यद्यपि आप ''मेरा और पराया'' के मोह से मुक्त हैं, तो भी आप उन लोगों के हृदयों में वास करते हैं, जो आपका निरन्तर ध्यान करते हैं और हृदय के भीतर से ही उनके सारे कष्टों को नष्ट कर देते हैं।'' तत्पश्चात् युधिष्ठिर ने कृष्ण से कहा,

''चूँकि हमने अनेक शुभ कार्य किये हैं केवल इसीलिए हम आपके चरणकमल देख पाने में समर्थ हो सके हैं, जिन्हें बड़े बड़े योगी भी नहीं प्राप्त कर पाते।'' राजा युधिष्ठिर से सम्मानित होते हुए श्रीकृष्ण अतिथि के रूप में कई महीनों तक सुखपूर्वक इन्द्रप्रस्थ में रहते रहे।

एक दिन कृष्ण तथा अर्जुन शिकार करने जंगल गये। यमुना नदी में स्नान करते हुए उन्होंने एक सुन्दर युवती देखी। कृष्ण के कहने पर अर्जुन उसके पास गये और उससे पूछा कि वह कौन है। उस सुन्दरी ने उत्तर दिया, ''मैं सूर्यपुत्री कालिन्दी हूँ। मैं भगवान् विष्णु को पति रूप में पाने की आशा से कठोर तपस्या करती रही हूँ। मैं किसी अन्य को पति रूप में स्वीकार नहीं करूँगी और जब तक वे मुझसे विवाह नहीं करते मैं यमुना में ही अपने पिता द्वारा बनवाये घर में रहूँगी।'' जब अर्जुन ने ये सारी बातें सर्वज्ञ कृष्ण को बतलाईं तो वे कालिन्दी को अपने रथ पर ले आये और तब तीनों व्यक्ति युधिष्ठिर के निवासस्थान में लौट गये।

बाद में पाण्डवों ने कृष्ण से अनुरोध किया कि वे उनके लिए एक नगर बनवा दें। उन्होंने देवताओं के शिल्पी विश्वकर्मा को भेजकर एक अत्यन्त आकर्षक नगरी तैयार करा दी। वहाँ अपने भक्तों के साथ कुछ काल तक रह कर भगवान् ने उन्हें तुष्ट किया। फिर अग्नि देवता को प्रसन्न करने के लिए कृष्ण ने अग्नि को खाण्डव वन देने की व्यवस्था की। कृष्ण ने अर्जुन से उस जंगल को जला डालने के लिए कहा और वे अर्जुन के साथ सारथी बन कर गए। अग्नि इस भेंट से इतना प्रसन्न हुआ कि उसने अर्जुन को गाण्डीव धनुष, घोड़े, रथ, दो तूणीर तथा एक तरकस दिये। जब खाण्डव वन जल रहा था, तो अर्जुन ने मय नामक दानव को लपटों से बचाया। उसने भी बदले में अर्जुन के लिए एक शानदार महल तैयार किया। इसी महल में दुर्योधन को बाद में तालाब-तल के स्थान पर ठोस फर्श का भ्रम हुआ जिससे वह खूब गीला हुआ और परेशान हुआ।

इसके बाद कृष्ण ने अर्जुन तथा उनके अन्य सम्बन्धियों से विदा ली और अपने परिचरों सहित द्वारका लौट गये। वहाँ उन्होंने कालिन्दी से विवाह कर लिया। कुछ काल बाद वे अवन्तीपुर गये जहाँ अनेक राजाओं की उपस्थिति में उन्होंने अवन्तीराज की बहन मित्रविन्दा का अपहरण किया। वह उनके प्रति आकृष्ट थी।

अयोध्या में नग्नजित नाम का एक भक्त राजा था। उसकी कन्या अतीव सुन्दर एवं विवाह के योग्य

थी। उसका नाम सत्या या नाग्नजिती था। इस कन्या के सम्बन्धियों ने एक प्रतिज्ञा रखी थी कि जो भी व्यक्ति सात भयानक बैलों के समूह को वश में कर लेगा उसी के साथ उस कन्या का विवाह कर दिया जायेगा। जब कृष्ण ने इस राजकुमारी के विषय में सुना तो वे अपने साथ सैनिकों की एक विशाल टोली लेकर अयोध्या गये। राजा नग्नजित ने उनका सभी प्रकार से सत्कार किया और विविध भेंटों से उनकी हर्षपूर्वक पूजा की। जब सत्या ने कृष्ण को देखा तो वह तुरन्त उन्हें पति रूप में चाहने लगी। राजा नग्नजित अपनी पुत्री के मनोभाव जान गया तो उसने अपनी इच्छा के बारे में कृष्ण को अवगत कराते हुए प्रस्ताव रखा कि कृष्ण के साथ उसकी पुत्री का विवाह हो जाय। उसने कृष्ण से स्नेहपूर्वक कहा, ''अकेले आप ही मेरी पुत्री के उपयुक्त पति होंगे और यदि आप सातों बैलों को वश में कर लेंगे तो आप अवश्य ही उससे विवाह कर सकेंगे।''

तब कृष्ण सात पृथक्-पृथक् रूपों में प्रकट हुए और सातों बैलों को वश में कर लिया। राजा नग्नजित ने उन्हें यथोचित विधि से अपनी पुत्री समर्पित कर दी और साथ में प्रचुर उपहारों से युक्त पर्याप्त दहेज भी दिया। भगवान् ने सत्या को अपने रथ पर बैठाया और द्वारका के लिए चल पड़े। तभी बैलों से पराजित प्रतिद्वन्द्वी राजाओं ने भगवान् कृष्ण पर आक्रमण करना चाहा किन्तु अर्जुन ने उन सबों को पछाड़ दिया और कृष्ण नाग्नजिती के साथ द्वारका के लिए रवाना हो गये।

बाद में श्रीकृष्ण ने भद्रा को स्वयंवर उत्सव में से अपहरण करके उसके साथ विवाह किया। इसी तरह उन्होंने मद्र के राजा की पुत्री लक्ष्मणा के साथ भी विवाह किया।

श्रीशुक उवाच
एकदा पाण्डवान्द्रष्टुं प्रतीतान्पुरुषोत्तमः ।
इन्द्रप्रस्थं गतः श्रृईमान्युयुधानादिभिर्वृतः ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—शुकदेव गोस्वामी ने कहा; एकदा—एक बार; पाण्डवान्—पाण्डु-पुत्रों को; द्रष्टुम्—देखने के लिए; प्रतीतान्—दृश्य; पुरुष-उत्तमः—भगवान्; इन्द्रप्रस्थम्—इन्द्रप्रस्थ, पाण्डवों की राजधानी; गतः—गये; श्री-मान्—समस्त ऐश्वर्य के स्वामी; युयुधान-आदिभिर्—युयुधान (सात्यकि) तथा अन्यों से; वृतः—घिर कर।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : एक बार परम ऐश्वर्यवान भगवान् पाण्डवों को देखने के लिए इन्द्रप्रस्थ गये जो पुनः जनता के बीच प्रकट हो चुके थे। भगवान् के साथ युयुधान तथा अन्य संगी थे।

तात्पर्य : कृष्ण तथा बलराम को छोड़कर प्राय: हर व्यक्ति यही सोचता था कि पाण्डवों की मृत्यु दुर्योधन द्वारा लाक्षागृह में लगाई गई आग से हो चुकी है। चूँकि अब पाण्डव फिर से जनता के बीच प्रकट हो चुके थे, अत: कृष्ण उनसे भेंट करने गये।

दृष्ट्वा तमागतं पार्था मुकुन्दमखिलेश्वरम् ।
उत्तस्थुर्युगपद्वीरा: प्राणा मुख्यमिवागतम् ॥ २ ॥

शब्दार्थ

दृष्ट्वा—देखकर; तम्—उस; आगतम्—आया हुआ; पार्था:—पृथा (कुन्ती) के पुत्र; मुकुन्दम्—कृष्ण को; अखिल—हर वस्तु के; ईश्वरम्—स्वामी; उत्तस्थु:—उठ खड़े हुए; युगपत्—एकसाथ; वीरा:—वीरगण; प्राणा:—इन्द्रियाँ; मुख्यम्—मुख्य, प्राण को; इव—मानो; आगतम्—वापस आ गया।

जब पाण्डवों ने देखा कि भगवान् मुकुन्द आए हैं, तो पृथा के वे वीर पुत्र एकसाथ उसी तरह उठ खड़े हुए जिस तरह इन्द्रियाँ प्राण के वापस आने पर सचेत हो उठती हैं।

तात्पर्य : यहाँ पर प्रयुक्त उपमा अत्यन्त कवित्वमय है। जब कोई व्यक्ति बेहोश होता है, तो इन्द्रियाँ कार्य नहीं करतीं किन्तु जब शरीर में चेतना लौट आती है, तो सारी इन्द्रियों में तत्क्षण प्राण दौड़ जाता है और वे कार्य करने लगती हैं। इसी प्रकार अपने स्वामी श्रीकृष्ण का स्वागत करने के लिए सचेत होकर सारे पाण्डव तुरन्त उठ खड़े हुए।

परिष्वज्याच्युतं वीरा अङ्गसङ्गहतैनस: ।
सानुरागस्मितं वक्त्रं वीक्ष्य तस्य मुदं ययु: ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

परिष्वज्य—आलिंगन करके; अच्युतम्—कृष्ण को; वीरा:—उन वीरों ने; अङ्ग—उनके शरीर के; सङ्ग—स्पर्श से; हत—विनष्ट; एनस:—उनके सारे पापकर्म; स-अनुराग—स्नेहिल; स्मितम्—हँसी के साथ; वक्त्रम्—मुखमंडल को; वीक्ष्य—देखकर; तस्य—उसका; मुदम्—हर्ष; ययु:—अनुभव किया।

इन वीरों ने भगवान् अच्युत का आलिंगन किया और उनके शरीर के स्पर्श से उन सबों के पाप दूर हो गये। उनके स्नेहिल, हँसी से युक्त मुखमण्डल को देख कर वे सब हर्ष से अभिभूत हो गये।

तात्पर्य : श्रील जीव गोस्वामी बतलाते हैं कि चूँकि पाण्डव कभी भी पापयुक्त नहीं थे अत: *एनस:* शब्द कृष्ण के वियोग से उत्पन्न पीड़ा का द्योतक है। अब वही दुख भगवान् के आने से दूर हो गया था।

युधिष्ठिरस्य भीमस्य कृत्वा पादाभिवन्दनम् ।
फाल्गुनं परिरभ्याथ यमाभ्यां चाभिवन्दितः ॥ ४॥

शब्दार्थ

युधिष्ठिरस्य भीमस्य—युधिष्ठिर तथा भीम के; कृत्वा—करके; पाद—पाँवों का; अभिवन्दनम्—नमस्कार; फाल्गुनम्—अर्जुन को; परिरभ्य—जोर से आलिंगन करके; अथ—तब; यमाभ्याम्—जुड़वा भाइयों, नकुल तथा सहदेव द्वारा; च—तथा; अभिवन्दितः—सादर सत्कार किये जाकर।

युधिष्ठिर तथा भीम के चरणों पर सादर नमस्कार करने तथा अर्जुन का प्रगाढ़ आलिंगन करने के बाद उन्होंने नकुल तथा सहदेव जुड़वाँ भाइयों का नमस्कार स्वीकार किया।

तात्पर्य : बाहर से कृष्ण पाण्डवों के ममेरे भाई थे और उनका सम्बन्ध ममेरे-फुफेरे भाइयों जैसा था। चूँकि युधिष्ठिर तथा भीम कृष्ण से बड़े थे अतः भगवान् ने उनके चरणों पर नमन किया किन्तु अपने समकक्ष अर्जुन का आलिंगन किया और छोटे भाइयों नकुल तथा सहदेव का नमस्कार स्वीकार किया। कभी कभी अनुभवहीन भक्तगण सोचते हैं कि कृष्णभावनामृत में बड़े भाई के सामने झुकना या उसका सम्मान करना पाप है। किन्तु कृष्ण के उदाहरण से हम इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि कृष्णभावनामृत में ज्येष्ठ भ्राता का आदर करना पापमय नहीं है।

परमासन आसीनं कृष्णा कृष्णमनिन्दिता ।
नवोढा व्रीडिता किञ्चिच्छनैरेत्याभ्यवन्दत ॥ ५॥

शब्दार्थ

परम—उच्च; आसने—आसन पर; आसीनम्—बैठे हुए; कृष्णा—द्रौपदी ने; कृष्णम्—कृष्ण को; अनिन्दिता—दोषरहित; नव—हाल ही की; ऊढा—विवाहिता; व्रीडिता—लजीली; किञ्चित्—कुछ कुछ; शनैः—धीरे धीरे; एत्य—पास आकर; अभ्यवन्दत—नमस्कार किया।

पाण्डवों की नवविवाहिता पत्नी, जो कि दोषरहित थी, धीरे धीरे तथा कुछ कुछ लजाते हुए भगवान् कृष्ण के पास आई, जो उस समय उच्च आसन पर बैठे थे और उन्हें नमस्कार किया।

तात्पर्य : श्रीमती द्रौपदी कृष्ण के प्रति इतनी अनुरक्त थीं कि उनका नाम ही कृष्णा था, जो कृष्ण नाम का स्त्रीलिंग रूप है। इसी तरह अर्जुन भी कृष्ण के प्रति अनुराग के कारण कृष्ण कहलाते थे। इसी प्रकार से आधुनिक कृष्णभावनामृत आन्दोलन के भक्तगण प्रायः ''कृष्ण'' कहलाते हैं। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि कृष्ण के भक्तों को उनके नाम से पुकारने की प्रथा बहुत पुरानी है।

तथैव सात्यकिः पार्थैः पूजितश्चाभिवन्दितः ।
निषसादासनेऽन्ये च पूजिताः पर्युपासत ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

तथा एव—इसी तरह; सात्यकिः—सात्यकि; पार्थैः—पृथा के पुत्रों द्वारा; पूजितः—पूजित; च—तथा; अभिवन्दितः—स्वागत किया गया; निषसाद—बैठ गया; आसने—आसन पर; अन्ये—अन्य लोग; च—तथा; पूजिताः—पूजित; पर्युपासत—चारों ओर बैठ गये।

सात्यकि ने भी पाण्डवों से पूजा तथा स्वागत प्राप्त करके सम्मानजनक आसन ग्रहण किया और भगवान् के अन्य संगी भी उचित सम्मान पाकर विविध स्थानों पर बैठ गये।

पृथाम्समागत्य कृताभिवादन-
स्तयातिहार्दार्द्रदृशाभिरम्भितः ।
आपृष्टवांस्तां कुशलं सहस्नुषां
पितृष्वसारम्परिपृष्टबान्धवः ॥ ७ ॥

शब्दार्थ

पृथाम्—महारानी कुन्ती तक; समागत्य—जाकर; कृत—करके; अभिवादनः—अपना नमस्कार; तया—उनके द्वारा; अति—अत्यन्त; हार्द—स्नेहपूर्वक; अर्द्र—नम; दृशा—जिनकी आँखें; अभिरम्भितः—आलिंगन किया; आपृष्टवान्—उन्होंने पूछा; ताम्—उनसे; कुशलम्—उनकी कुशलता के बारे में; सह—साथ; स्नुषाम्—अपनी पुत्रवधू द्रौपदी के साथ; पितृ—अपने पिता वसुदेव की; स्वसारम्—बहिन; परिपृष्ट—विस्तार से पूछा; बान्धवः—उनके सम्बन्धियों के (द्वारका में रह रहे) बारे में।

तब भगवान् अपनी बुआ महारानी कुन्ती को देखने गये। वे उनके समक्ष झुके और उन्होंने उनका आलिंगन किया, तो अति स्नेह से उनकी आँखें नम हो गईं। भगवान् कृष्ण ने उनसे तथा उनकी पुत्रवधू द्रौपदी से उनकी कुशलता पूछी और उन्होंने भगवान् से उनके सम्बन्धियों (द्वारका के) के विषय में पूछा।

तात्पर्य : विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर यह कल्पना करते हैं कि चूँकि भगवान् कृष्ण आसन पर बैठे थे अतएव उन्होंने अपनी बुआ कुन्ती को अतीव उत्सुकतापूर्वक उनको मिलने के लिए आते देखा। तब वे तुरन्त उठ खड़े हुए, तेजी से उनके पास गये और उन्हें नमस्कार किया। उनकी आँखें अत्यधिक प्रेम के कारण आर्द्र हो उठीं, उन्होंने उनका आलिंगन किया और उनका सिर सूँघा।

तमाह प्रेमवैक्लव्यरुद्धकण्ठाश्रुलोचना ।
स्मरन्ती तान्बहून्क्लेशान्क्लेशापायात्मदर्शनम् ॥ ८ ॥

शब्दार्थ

तम्—उनसे; आह—कहा; प्रेम—प्रेम का; वैक्लव्य—शोक के कारण; रुद्ध—अवरुद्ध; कण्ठा—कण्ठ वाली; अश्रु—आँसुओं से (पूरित); लोचना—आँखों वाली; स्मरन्ती—स्मरण करती; तान्—उन; बहून्—अनेक; क्लेशान्—क्लेशों को; क्लेश—क्लेश; अपाय—दूर करने के लिए; आत्म—स्वयं; दर्शनम्—दर्शन देने वाले।

महारानी कुन्ती प्रेम से इतनी अभिभूत हो गयी कि उनका गला रुँध गया और उनकी आँखें आँसुओं से भर गईं। उन्होंने उन तमाम कष्टों का स्मरण किया जिसे उन्होंने तथा उनके पुत्रों ने सहा था। इस तरह उन्होंने भगवान् कृष्ण को सम्बोधित करते हुए कहा जो अपने भक्तों के समक्ष उनका कष्ट भगाने के लिए प्रकट होते हैं।

तदैव कुशलं नोऽभूत्सनाथास्ते कृता वयम् ।
ज्ञतीन्नः स्मरता कृष्ण भ्राता मे प्रेषितस्त्वया ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

तदा—उस समय; एव—केवल; कुशलम्—कुशल-क्षेम; नः—हमारी; अभूत्—हो गई; स—सहित; नाथाः—रक्षक; ते—तुम्हारे द्वारा; कृताः—निर्मित; वयम्—हम; ज्ञातीन्—तुम्हारे सम्बन्धी; नः—हमको; स्मरता—जिन्होंने स्मरण किया; कृष्ण—हे कृष्ण; भ्राता—भाई (अक्रूर); मे—मेरा; प्रेषितः—भेजा गया; त्वया—तुम्हारे द्वारा।

[महारानी कुन्ती ने कहा] : हे कृष्ण, हमारी कुशल-मंगल तो तभी आश्वस्त हो गई जब आपने अपने सम्बन्धियों का अर्थात् हमारा स्मरण किया और मेरे भाई (अक्रूर को) को हमारे पास भेज कर हमें अपना संरक्षण प्रदान किया।

न तेऽस्ति स्वपरभ्रान्तिर्विश्वस्य सुहृदात्मनः ।
तथापि स्मरतां शश्वत्क्लेशान्हंसि हृदि स्थितः ॥ १० ॥

शब्दार्थ

न—नहीं; ते—तुम्हारे लिए; अस्ति—है; स्व—अपना; पर—तथा दूसरों का; भ्रान्तिः—भ्रम; विश्वस्य—ब्रह्माण्ड का; सुहृत्—शुभचिन्तक; आत्मनः—तथा आत्मा के लिए; तथा अपि—तो भी; स्मरताम्—स्मरण करने वाले के; शश्वत्—निरन्तर; क्लेशान्—क्लेशों को; हंसि—नष्ट करते हो; हृदि—हृदय में; स्थितः—स्थित।

आप जो कि ब्रह्माण्ड के शुभचिन्तक मित्र एवं परमात्मा हैं उनके लिए ''अपना'' तथा ''पराया'' का कोई मोह नहीं रहता। तो भी, सबों के हृदयों में निवास करने वाले आप उनके कष्टों को समूल नष्ट कर देते हैं, जो निरन्तर आपका स्मरण करते हैं।

तात्पर्य : यहाँ पर बुद्धिमान कुन्ती यह इंगित करती हैं कि यद्यपि भगवान् कृष्ण उनके साथ सम्बन्धी जैसा स्नेहपूर्ण बर्ताव कर रहे हैं किन्तु वे ब्रह्माण्ड के शुभचिन्तक आत्मा के रूप में अपने पद के साथ कोई समझौता नहीं कर रहे हैं। दूसरे शब्दों में, भगवान् पक्षपात नहीं करते। जैसाकि वे *भगवद्गीता* (९.२९) में कहते हैं—*समोऽहं सर्वभूतेषु*—मैं सबों के लिए समान हूँ। अतः जब भगवान् सारी आत्माओं के साथ प्रतिदान करते हैं, तो यह स्वाभाविक है कि जो उनसे उत्कटता से प्रेम करते हैं,

वे विशेष ध्यानआकर्षण कर लेते हैं क्योंकि वे उन्हीं को चाहते हैं, अन्य किसी को नहीं।

युधिष्ठिर उवाच
किं न आचरितं श्रेयो न वेदाहमधीश्वर ।
योगेश्वराणां दुर्दर्शो यन्नो दृष्टः कुमेधसाम् ॥ ११ ॥

शब्दार्थ

युधिष्ठिरः उवाच—युधिष्ठिर ने कहा; किम्—क्या; नः—हमारे द्वारा; आचरितम्—किया गया; श्रेयः—पुण्य-कर्म; न वेद—नहीं जानता; अहम्—मैं; अधीश्वर—हे परम नियन्ता; योग—योग के; ईश्वराणाम्—स्वामियों द्वारा; दुर्दर्शः—विरले ही दिखने वाला; यत्—वह; नः—हमारे द्वारा; दृष्टः—देखा हुआ; कु-मेधसम्—अज्ञानियों द्वारा।

राजा युधिष्ठिर ने कहा : हे परम नियन्ता, मैं नहीं जानता कि हम मूर्खों ने कौन से पुण्य-कर्म किये हैं कि आपका दर्शन पा रहे हैं जिसे बड़े बड़े विरले योगेश्वर ही कर पाते हैं।

इति वै वार्षिकान्मासान्राज्ञा सोऽभ्यर्थितः सुखम् ।
जनयन्नयनानन्दमिन्द्रप्रस्थौकसां विभुः ॥ १२ ॥

शब्दार्थ

इति—इस प्रकार; वै—निस्सन्देह; वार्षिकान्—वर्षा ऋतु के; मासान्—महीने; राज्ञा—राजा द्वारा; सः—वह; अभ्यर्थितः—अनुरोध किया गया; सुखम्—सुखपूर्वक; जनयन्—उत्पन्न करते हुए; नयन—आँखों के लिए; आनन्दम्—आनन्द; इन्द्रप्रस्थ-ओकसाम्—इन्द्रप्रस्थ के निवासियों के; विभुः—सर्वशक्तिमान प्रभु।

जब राजा ने भगवान् कृष्ण को सबों के साथ रहने का अनुरोध किया, तो वर्षा ऋतु के महीनों में नगर के निवासियों के नेत्रों को आनन्द प्रदान करते हुए भगवान् सुखपूर्वक इन्द्रप्रस्थ में रहते रहे।

तात्पर्य : *भागवत* के पाठकों को चाहिए कि यदि सम्भव हो तो संस्कृत श्लोकों का सही सही उच्चारण करने का प्रयास करें क्योंकि ये अत्यन्त काव्यमय हैं।

एकदा रथमारुह्य विजयो वानरध्वजम् ।
गाण्डीवं धनुरादाय तूणौ चाक्षयसायकौ ॥ १३ ॥
साकं कृष्णेन सन्नद्धो विहर्तुं विपिनं महत् ।
बहुव्यालमृगाकीर्णं प्राविशत्परवीरहा ॥ १४ ॥

शब्दार्थ

एकदा—एक बार; रथम्—रथ में; आरुह्य—सवार होकर; विजयः—अर्जुन; वानर—बन्दर (हनुमान); ध्वजम्—जिसकी ध्वजा में; गाण्डीवम्—अपना गाण्डीव; धनुः—धनुष; आदाय—लेकर; तूणौ—दो तरकस; च—तथा; अक्षय—न चुकने वाले; सायकौ—बाण; साकम्—साथ; कृष्णेन—कृष्ण के; सन्नद्धः—कवच पहन कर; विहर्तुम्—आखेट करने; विपिनम्—जंगल

में; महत्—विशाल; बहु—अनेक; व्याल-मृग—शिकारी पशु; आकीर्णम्—भरे हुए; प्राविशत्—घुसा; पर—शत्रु; वीर—वीरों का; हा—मारने वाला।

एक बार बलशाली शत्रुओं का हन्ता अर्जुन अपना कवच पहन कर, हनुमान से चिन्हित ध्वजा वाले अपने रथ पर सवार होकर, अपना धनुष तथा दो अक्षय तरकस लेकर, भगवान् कृष्ण के साथ एक विशाल जंगल में शिकार खेलने गया जो हिंस्र पशुओं से परिपूर्ण था।

तात्पर्य : यह घटना अवश्य ही खाण्डव वन के दहन के बाद की होगी क्योंकि अब अर्जुन गाण्डीव धनुष तथा उन अन्य हथियारों का प्रयोग कर रहा था, जो उसे उपर्युक्त घटना के अवसर पर प्राप्त हुए थे।

तत्राविध्यच्छरैर्व्याघ्रान्शूकरान्महिषान्रुरून् ।
शरभान्गवयान्खड्गान्हरिणान्शशशल्लकान् ॥ १५ ॥

शब्दार्थ

तत्र—वहाँ; अविध्यत्—बींध दिया; शरैः—बाणों से; व्याघ्रान्—बाघों को; शूकरान्—सुअरों को; महिषान्—जंगली भैसों को; रुरून्—एक किस्म के हिरनों को; शरभान्—हिरनों को; गवयान्—नील-गायों को; खड्गान्—गैंडों को; हरिणान्—श्याम मृगों को; शश—खरगोशों; शल्लकान्—तथा साहियों को।

अर्जुन ने अपने बाणों से उस जंगल के बाघों, सुअरों, जंगली भैसों, रुरूओं, शरभों, गवयों, गैडों, श्याम हिरनों, खरगोशों तथा साहियों को बेध डाला।

तान्निन्युः किङ्करा राज्ञे मेध्यान्पर्वण्युपागते ।
तृट्परीतः परिश्रान्तो बिभत्सुर्यमुनामगात् ॥ १६ ॥

शब्दार्थ

तान्—उनको; निन्युः—ले गये; किङ्कराः—नौकर; राज्ञे—राजा तक; मेध्यान्—यज्ञ में बलि के योग्य; पर्वणि—विशेष अवसर (पर्व) पर; उपागते—पास आ रहे; तृट्—प्यास से; परीतः—हारे; परिश्रान्तः—थके; बिभत्सुः—अर्जुन; यमुनाम्—यमुना नदी के तट पर; अगात्—गया।

नौकरों का एक दल मारे गये उन पशुओं को राजा युधिष्ठिर के पास ले गया जो किसी विशेष पर्व पर यज्ञ में अर्पित करने के योग्य थे। तत्पश्चात् प्यासे तथा थके होने से अर्जुन यमुना नदी के तट पर गया।

तात्पर्य : श्रील प्रभुपाद प्राय: कहा करते थे कि क्षत्रिय या योद्धा कई कारणों से जैसे अपने युद्ध-कौशल का अभ्यास करने, खूँखार जानवरों की जो मनुष्य के लिए संकट का कारण थे, जनसंख्या नियंत्रित रखने तथा वैदिक यज्ञों के लिए पशु प्रदान करने के उद्देश्य से जंगल में शिकार करते थे। यज्ञों

की शक्ति से मारे गये पशुओं को नवीन शरीर मिल जाते थे। चूँकि पुरोहितों में अब वह शक्ति नहीं रह गई है, अत: यज्ञ का अर्थ होगा केवल पशु-वध; इसलिए यज्ञ वर्जित हैं।

श्रीमद्भागवत के चतुर्थ स्कन्ध में हम देखते हैं कि नारदमुनि ने प्राचीनबर्हिषत् नामक राजा को वैध शिकार के इस नियम का दुरुपयोग करने के लिए बुरी तरह से प्रताड़ित किया है। वस्तुत: यह राजा आधुनिक शिकारियों जैसा बन गया था, जो एक तथाकथित शौक के रूप में पशुओं की निर्मम हत्या करते हैं।

तत्रोपस्पृश्य विशदं पीत्वा वारि महारथौ ।
कृष्णौ ददृशतु: कन्यां चरन्तीं चारुदर्शनाम् ॥ १७॥

शब्दार्थ

तत्र—वहाँ; उपस्पृश्य—नहाकर; विशदम्—स्वच्छ; पीत्वा—पीकर; वारि—जल; महा-रथौ—महारथी योद्धा; कृष्णौ—दोनों कृष्णों ने; ददृशतु:—देखा; कन्याम्—कन्या को; चरन्तीम्—विचरण करती; चारु-दर्शनाम्—देखने में सुन्दर।

दोनों कृष्णों ने वहाँ स्नान करने के बाद नदी का स्वच्छ जल पिया। तब दोनों महारथियों ने पास ही टहलती एक आकर्षक युवती को देखा।

तामासाद्य वरारोहां सुद्विजां रुचिराननाम् ।
पप्रच्छ प्रेषित: सख्या फाल्गुन: प्रमदोत्तमाम् ॥ १८॥

शब्दार्थ

ताम्—उसके; आसाद्य—पास पहुँचकर; वरा—उत्तम; आरोहाम्—नितम्ब वाली; सु—सुन्दर; द्विजाम्—दाँतों वाली; रुचिर—आकर्षक; आननाम्—मुख वाली; पप्रच्छ—पूछा; प्रेषित:—भेजा गया; सख्या—मित्र श्रीकृष्ण द्वारा; फाल्गुन:—अर्जुन ने; प्रमदा—स्त्री से; उत्तमाम्—असाधारण।

अपने मित्र द्वारा भेजे जाने पर अर्जुन उस असाधारण युवती के पास गये। वह सुन्दर नितम्ब, उत्तम दाँत तथा आकर्षक मुख वाली थी। उन्होंने उससे इस प्रकार पूछा।

तात्पर्य : कृष्ण चाहते थे कि अर्जुन जाकर इस युवती की प्रगाढ़ भक्ति का पता लगाये। इसीलिए उन्होंने प्रारम्भिक पूछताछ करने के लिए आग्रह किया।

का त्वं कस्यासि सुश्रोणि कुतो वा किं चिकीर्षसि ।
मन्ये त्वां पतिमिच्छन्तीं सर्वं कथय शोभने ॥ १९॥

शब्दार्थ

का—कौन; त्वम्—तुम; कस्य—किसकी; असि—हो; सु-श्रोणि—हे सुन्दर कटि वाली; कुतः—कहाँ से; वा—अथवा; किम्—क्या; चिकीर्षसि—करना चाहती हो; मन्ये—मैं सोचता हूँ; त्वाम्—तुम; पतिम्—पति की; इच्छन्तीम्—खोज करती; सर्वम्—प्रत्येक वस्तु; कथय—कहो; शोभने—हे सुन्दरी।

[अर्जुन ने कहा] : हे सुन्दर कटि वाली, तुम कौन हो? तुम किसकी पुत्री हो और तुम कहाँ से आई हो? तुम यहाँ क्या कर रही हो? मैं सोच रहा हूँ कि तुम पति की आकांक्षी हो। हे सुन्दरी, मुझसे प्रत्येक बात बतला दो।

श्रीकालिन्द्युवाच
अहं देवस्य सवितुर्दुहिता पतिमिच्छती ।
विष्णुं वरेण्यं वरदं तपः परममास्थितः ॥ २० ॥

शब्दार्थ

श्री-कालिन्दी उवाच—श्री कालिन्दी ने कहा; अहम्—मैं; देवस्य—देवता की; सवितुः—सूर्य; दुहिता—पुत्री; पतिम्—पति रूप में; इच्छती—चाहती हुई; विष्णुम्—भगवान् विष्णु को; वरेण्यम्—सर्वश्रेष्ठ रुचि; वर-दम्—वर देने वाले; तपः—तपस्या में; परमम्—कठोर; आस्थितः—लगी हुई।

श्री कालिन्दी ने कहा : मैं सूर्यदेव की पुत्री हूँ। मैं परम सुन्दर तथा वरदानी भगवान् विष्णु को अपने पति के रूप में चाहती हूँ और इसीलिए मैं कठोर तपस्या कर रही हूँ।

तात्पर्य : जैसाकि श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती इंगित करते हैं, श्रीमती कालिन्दी ने ठीक ही समझा था कि समस्त वरों के स्रोत होने से भगवान् विष्णु परम पति हैं और वे अपनी पत्नी की सारी इच्छाएँ पूरी कर सकते हैं।

नान्यं पतिं वृणे वीर तमृते श्रीनिकेतनम् ।
तुष्यतां मे स भगवान्मुकुन्दोऽनाथसंश्रयः ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

न—नहीं; अन्यम्—दूसरा; पतिम्—पति; वृणे—वरण करूँगी; वीर—हे वीर; तम्—उसके; ऋते—अतिरिक्त; श्री—लक्ष्मी का; निकेतनम्—धाम; तुष्यताम्—प्रसन्न हों; मे—मुझसे; सः—वह; भगवान्—भगवान्; मुकुन्दः—कृष्ण; अनाथ—स्वामीविहीन का; संश्रयः—आश्रय।

मैं उनको जो लक्ष्मी देवी के धाम हैं, छोड़कर और कोई पति स्वीकार नहीं करूँगी। वे भगवान् मुकुन्द, जो कि अनाथों के आश्रय हैं, मुझ पर प्रसन्न हों।

तात्पर्य : सुन्दर कालिन्दी ने यहाँ पर कुछ सन्देह प्रकट किया है। वे बल देती हैं कि उन्हें भगवान् कृष्ण के अतिरिक्त कोई पति स्वीकार नहीं है। वे यह कहती हैं कि वे अनाथों के आश्रय हैं। चूँकि वे कोई अन्य आश्रय स्वीकार नहीं करेंगी इसलिए कृष्ण को चाहिए कि उन्हें शरण दें। यही नहीं, वे

कहती हैं—*तुष्यतां मे स भगवान्*—वे भगवान् मुझ पर प्रसन्न हों। यही उनकी विनती है।

जैसाकि श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती इंगित करते हैं, यद्यपि कालिन्दी एकान्त स्थान में रह रही आश्रयहीन युवती है, तो भी वह भयभीत नहीं है। भगवान् कृष्ण के प्रति ऐसी गूढ़ श्रद्धा और भक्ति आदर्श कृष्णभावनामृत है और श्रीमती कालिन्दी की इच्छा शीघ्र ही पूरी हो जाएगी।

कालिन्दीति समाख्याता वसामि यमुनाजले ।
निर्मिते भवने पित्रा यावदच्युतदर्शनम् ॥ २२॥

शब्दार्थ

कालिन्दी—कालिन्दी; इति—इस प्रकार; समाख्याता—नाम वाली; वसामि—रह रही हूँ; यमुना-जले—यमुना के जल में; निर्मिते—निर्मित; भवने—भवन में; पित्रा—अपने पिता द्वारा; यावत्—जब तक; अच्युत—भगवान् कृष्ण के; दर्शनम्—दर्शन।

मेरा नाम कालिन्दी है और मैं अपने पिता द्वारा यमुना जल के भीतर निर्मित भवन में रहती हूँ। मैं भगवान् अच्युत से भेंट होने तक यहीं रुकूँगी।

तात्पर्य : चूँकि कालिन्दी साक्षात् सूर्यदेव की प्रिय पुत्री थीं अतएव किसमें साहस था कि उन्हें छेड़ता? इस घटना से हम महात्माओं द्वारा विगत युगों में सम्पन्न सुन्दर आध्यात्मिक विधियों की सराहना कर सकते हैं। सांसारिक ''प्रेम कार्यकलापों'' के विपरीत, सुन्दर कालिन्दी का भगवान् कृष्ण के प्रति प्रेम शुद्ध और पूर्ण था। यद्यपि कालिन्दी अभी कोमल युवती थीं किन्तु कृष्ण से विवाह करने का संकल्प इतना प्रबल था कि उन्होंने अपने पिता से कह कर यमुना नदी के भीतर एक मकान बनवाने के लिए व्यवस्था की जहाँ वे तब तक कठिन तपस्या कर सकें जब तक उनका प्रियतम नहीं आ जाता।

तथावदद्गुडाकेशो वासुदेवाय सोऽपि ताम् ।
रथमारोप्य तद्विद्वान्धर्मराजमुपागमत् ॥ २३॥

शब्दार्थ

तथा—इस प्रकार; अवदत्—कहा; गुडाकेशः—अर्जुन ने; वासुदेवाय—भगवान् कृष्ण से; सः—वह; अपि—तथा; ताम्—उसको; रथम्—रथ पर; आरोप्य—चढ़ा कर; तत्—इन सबसे; विद्वान्—अवगत; धर्म-राजम्—युधिष्ठिर के पास; उपागमत्—गया।

[शुकदेव गोस्वामी ने आगे कहा] : अर्जुन ने ये सारी बातें वासुदेव से बतलाईं जो पहले से इनसे अवगत थे। तब भगवान् ने कालिन्दी को अपने रथ पर चढ़ा लिया और राजा युधिष्ठिर को

मिलने वापस चले गये।

यदैव कृष्णः सन्दिष्टः पार्थानां परमाद्भुतम् ।
कारयामास नगरं विचित्रं विश्वकर्मणा ॥ २४॥

शब्दार्थ

यदा एव—जब; कृष्णः—कृष्ण; सन्दिष्टः—प्रार्थना करने पर; पार्थानाम्—पृथा के पुत्रों के लिए; परम—अतीव; अद्भुतम्—अद्भुत; कारयाम् आस—बनवाया था; नगरम्—नगर; विचित्रम्—विविधता से युक्त; विश्वकर्मणा—देवताओं के शिल्पी विश्वकर्मा द्वारा।

[एक पुरानी घटना बतलाते हुए शुकदेव गोस्वामी ने कहा]: पाण्डवों के अनुरोध पर भगवान् कृष्ण ने एक अत्यन्त अद्भुत एवं विचित्र नगरी का निर्माण विश्वकर्मा से कराया था।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती उल्लेख करते हैं कि यह नगरी खाण्डव वन के जलने के पूर्व निर्मित हुई थी अतः कालिन्दी को पत्नी बनाने के पूर्व यह घटना घटी थी।

भगवांस्तत्र निवसन्स्वानां प्रियचिकीर्षया ।
अग्नये खाण्डवं दातुमर्जुनस्यास सारथिः ॥ २५॥

शब्दार्थ

भगवान्—भगवान्; तत्र—वहाँ; निवसन्—रहते हुए; स्वानाम्—अपने (भक्तों) के लिए; प्रिय—आनन्द; चिकीर्षया—देने की इच्छा से; अग्नये—अग्नि को; खाण्डवम्—खाण्डव वन; दातुम्—देने के लिए; अर्जुनस्य—अर्जुन के; आस—बने; सारथिः—रथचालक।

भगवान् अपने भक्तों को प्रसन्न करने के लिए उस नगरी में कुछ समय तक रहते रहे। एक अवसर पर श्रीकृष्ण ने अग्नि को दान के रूप में खाण्डव वन देना चाहा अतः वे अर्जुन के सारथी बने।

तात्पर्य : श्रील जीव गोस्वामी ने पाण्डवों के साथ कृष्ण के रुकने की अवधि में घटी घटनाओं का अनुक्रम बतलाया है। वे कहते हैं कि पहले खाण्डव वन जलाया गया, फिर कालिन्दी प्राप्त हुई, तब नगरी बनी और तब जाकर पाण्डवों को सभा-भवन भेंट किया गया था।

सोऽग्निस्तुष्टो धनुरदाद्धयान्श्वेतान्रथं नृप ।
अर्जुनायाक्षयौ तूणौ वर्म चाभेद्यमस्त्रिभिः ॥ २६॥

शब्दार्थ

सः—उस; अग्निः—अग्निदेव ने; तुष्टः—प्रसन्न होकर; धनुः—धनुष; अदात्—दिया; हयान्—घोड़ों को; श्वेतान्—सफेद; रथम्—रथ; नृप—हे राजा (परीक्षित); अर्जुनाय—अर्जुन को; अक्षयौ—न समाप्त होने वाले; तूणौ—दो तरकस; वर्म—कवच; च—तथा; अभेद्यम्—न टूटने वाला; अस्त्रिभिः—हथियार चलाने वालों के द्वारा।

हे राजन्, अग्नि ने प्रसन्न होकर अर्जुन को एक धनुष, श्वेत घोड़ों की एक जोड़ी, एक रथ, कभी रिक्त न होने वाले दो तरकस दिये तथा एक कवच दिया जिसे कोई योद्धा हथियारों से भेद नहीं सकता था।

मयश्च मोचितो वह्नेः सभां सख्य उपाहरत् ।
यस्मिन्दुर्योधनस्यासीज्जलस्थलदृशिभ्रमः ॥ २७ ॥

शब्दार्थ

मयः—मय नामक दानव ने; च—तथा; मोचितः—मुक्त हुआ; वह्नेः—अग्नि से; सभाम्—सभाभवन; सख्ये—अपने मित्र, अर्जुन को; उपाहरत्—भेंट किया; यस्मिन्—जिसमें; दुर्योधनस्य—दुर्योधन का; आसीत्—था; जल—जल; स्थल—तथा भूमि के; दृशि—देखने में; भ्रमः—भ्रम।

जब मय दानव अपने मित्र अर्जुन द्वारा अग्नि से बचा लिया गया तो उसने उन्हें एक सभाभवन भेंट किया जिसमें आगे चलकर दुर्योधन को जल के स्थान पर ठोस फर्श का भ्रम होता है।

स तेन समनुज्ञातः सुहृद्भिश्चानुमोदितः ।
आययौ द्वारकां भूयः सात्यकिप्रमखैर्वृतः ॥ २८ ॥

शब्दार्थ

सः—वह, कृष्ण; तेन—उसके (अर्जुन के) द्वारा; समनुज्ञातः—विदा होकर; सु-हृद्भिः—शुभचिन्तकों द्वारा; च—तथा; अनुमोदितः—अनुमति दिया गया; आययौ—गया; द्वारकाम्—द्वारका; भूयः—फिर; सात्यकि-प्रमुखैः—सात्यकि इत्यादि के; वृतः—साथ।

तब अर्जुन तथा अन्य शुभचिन्तक संबन्धियों एवं मित्रों से विदा लेकर भगवान् कृष्ण सात्यकि तथा अपने अन्य परिचरों समेत द्वारका लौट गये।

अथोपयेमे कालिन्दीं सुपुण्यर्त्वृक्ष ऊर्जिते ।
वितन्वन्परमानन्दं स्वानां परममङ्गलः ॥ २९ ॥

शब्दार्थ

अथ—तब; उपयेमे—विवाह किया; कालिन्दीम्—कालिन्दी से; सु—अत्यन्त; पुण्य—शुभ; ऋतु—ऋतु; ऋक्षे—तथा चान्द्र लग्न; ऊर्जिते—जिस दिन सूर्य तथा अन्य ग्रहों की स्थिति उत्तम थी; वितन्वन्—फैलाते हुए; परम—परम; आनन्दम्—आनन्द; स्वानाम्—अपने भक्तों के लिए; परम—अत्यन्त; मङ्गलः—शुभ।

तब परम ऐश्वर्यशाली भगवान् ने कालिन्दी के साथ उस दिन विवाह कर लिया जिस दिन

ऋतु, चन्द्र लग्न एवं सूर्य तथा अन्य ग्रहों की स्थिति इत्यादि सभी शुभ थे। इस तरह उन्होंने अपने भक्तों को परम आनन्द प्रदान किया।

विन्द्यानुविन्द्यावावन्त्यौ दुर्योधनवशानुगौ ।
स्वयंवरे स्वभगिनीं कृष्णे सक्तां न्यषेधताम् ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

विन्द्य-अनुविन्द्यौ—विन्द्य तथा अनुविन्द्य; आवन्त्यौ—अवन्ती के दो राजा; दुर्योधन-वश-अनुगौ—दुर्योधन के अधीन; स्वयम्वरे—स्वयम्वर में; स्व—अपनी; भगिनीम्—बहन को; कृष्णे—कृष्ण को; सक्ताम्—जो आसक्त थी; न्यषेधताम्—रोक दिया।

विन्द्य तथा अनुविन्द्य जो अवन्ती के संयुक्त राजा थे, दुर्योधन के अनुयायी थे। जब स्वयंवर उत्सव में पति चुनने का अवसर आया तो उन्होंने अपनी बहिन (मित्रविन्दा) को कृष्ण का वरण करने से मना किया यद्यपि वह उनके प्रति अत्यधिक आसक्त थी।

तात्पर्य : कुरुओं तथा पाण्डवों में शत्रुभाव इतना प्रबल था कि मित्रविन्दा के भाइयों ने दुर्योधन से मित्रता के कारण उसे कृष्ण को अपना पति चुनने से मना कर दिया।

राजाधिदेव्यास्तनयां मित्रविन्दां पितृष्वसुः ।
प्रसह्य हृतवान्कृष्णो राजन्राज्ञां प्रपश्यताम् ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ

राजाधिदेव्याः—राजाधिदेवी महारानी की; तनयाम्—पुत्री; मित्रविन्दाम्—मित्रविन्दा को; पितृ—पिता की; स्वसुः—बहन का; प्रसह्य—बलपूर्वक; हृतवान्—हरण कर लिया; कृष्णः—कृष्ण ने; राजन्—हे राजा (परीक्षित); राज्ञाम्—राजाओं के; प्रपश्यताम्—देखते हुए।

हे राजन्, अपनी बुआ राजाधिदेवी की पुत्री मित्रविन्दा को प्रतिद्वन्द्वी राजाओं की आँखों के सामने से भगवान् कृष्ण बलपूर्वक उठा ले गये।

नग्नजिन्नाम कौशल्य आसीद्राजातिधार्मिकः ।
तस्य सत्याभवत्कन्या देवी नाग्नजिती नृप ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ

नग्नजित्—नग्नजित; नाम—नामक; कौशल्यः—कौशल्य (अयोध्या) का राजा; आसीत्—था; राजा—राजा; अति—अत्यन्त; धार्मिकः—धार्मिक; तस्य—उसकी; सत्या—सत्या; अभवत्—थी; कन्या—पुत्री; देवी—सुन्दर; नाग्नजिती—नाग्नजिती नाम भी था; नृप—हे राजा।

हे राजन्, कौशल्य के अत्यन्त धार्मिक राजा नग्नजित के एक सुन्दर कन्या थी जिसका नाम सत्या अथवा नाग्नजिती था।

न तां शेकुर्नृपा वोढुमजित्वा सप्तगोवृषान् ।
तीक्ष्णशृङ्गान्सुदुर्धर्षान्वीर्यगन्धासहान्खलान् ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ

न—नहीं; ताम्—उसको; शेकु:—समर्थ थे; नृपा:—राजागण; वोढुम्—ब्याहने के लिए; अजित्वा—हराये बिना; सप्त—सात; गो-वृषान्—बैलों को; तीक्ष्ण—तेज; शृङ्गान्—सींग वाले; सु—अत्यन्त; दुर्धर्षान्—वश में न आने वाले; वीर्य—वीरों की; गन्ध—महक; असहान्—सहन न करते हुए; खलान्—दुष्ट।

जो राजा ब्याहने के लिए आते थे उन्हें तब तक विवाह नहीं करने दिया जाता था जब तक वे तेज सींगों वाले सात बैलों को वश में न कर लें। ये बैल अत्यन्त दुष्ट तथा वश में न आने वाले थे और वे वीरों की गंध भी सहन नहीं कर सकते थे।

तां श्रुत्वा वृषजिल्लभ्यां भगवान्सात्वतां पति: ।
जगाम कौशल्यपुरं सैन्येन महता वृत: ॥ ३४ ॥

शब्दार्थ

ताम्—उसके विषय में; श्रुत्वा—सुनकर; वृष—बैल; जित्—जीतने वाला; लभ्याम्—प्राप्तनीय; भगवान्—भगवान्; सात्वताम्—वैष्णवों के; पति:—स्वामी; जगाम—गये; कौशल्य-पुरम्—कौशल्य राज्य की राजधानी में; सैन्येन—सेना से; महता—विशाल; वृत:—घिर कर।

जब वैष्णवों के स्वामी भगवान् ने उस राजकुमारी के बारे में सुना जो बैलों के विजेता द्वारा जीती जानी थी, तो वे विशाल सेना के साथ कौशल्य की राजधानी गये।

स कोशलपति: प्रीत: प्रत्युत्थानासनादिभि: ।
अर्हणेनापि गुरुणा पूजयन्प्रतिनन्दित: ॥ ३५ ॥

शब्दार्थ

स:—उस; कोशल-पति:—कोशल के स्वामी ने; प्रीत:—प्रसन्न; प्रत्युत्थान—खड़े होकर; आसन—आसन; आदिभि:—इत्यादि प्रदान करके; अर्हणेन—तथा भेंटों से; अपि—भी; गुरुणा—पर्याप्त; पूजयन्—पूजा करते हुए; प्रतिनन्दित:—उसका भी सत्कार किया।

कोशल का राजा कृष्ण को देखकर हर्षित हुआ। उसने अपने सिंहासन से उठकर तथा प्रतिष्ठित पद एवं पर्याप्त उपहार देकर भगवान् कृष्ण की पूजा की। भगवान् कृष्ण ने भी राजा का आदरपूर्वक अभिवादन किया।

वरं विलोक्याभिमतं समागतं
नरेन्द्रकन्या चकमे रमापतिम् ।

भूयादयं मे पतिराशिषोऽनलः
करोतु सत्या यदि मे धृतो व्रतः ॥ ३६ ॥

शब्दार्थ

वरम्—दूल्हे को; विलोक्य—देखकर; अभिमतम्—ग्राह्य; समागतम्—आई; नरेन्द्र—राजा की; कन्या—पुत्री; चकमे—इच्छा की; रमा—लक्ष्मी के; पतिम्—पति को; भूयात्—बन सके; अयम्—वह; मे—मेरा; पतिः—पति; आशिषः—आशाएँ; अनलः—अग्नि; करोतु—कर दे; सत्याः—सच; यदि—यदि; मे—मेरे द्वारा; धृतः—पालन किया गया; व्रतः—मेरा व्रत।

जब राजा की पुत्री ने देखा कि वह सर्वाधिक उपयुक्त दूल्हा आया है, तो उसने तुरन्त ही रमापति श्रीकृष्ण को पाने की कामना की। उसने प्रार्थना की, ''वे मेरे पति बनें। यदि मैंने व्रत किये हैं, तो पवित्र अग्नि मेरी आशाओं को पूरा करे।''

यत्पादपङ्कजरजः शिरसा बिभर्ति
श्रीरब्जजः सगिरिशः सहलोकपालैः ।
लीलातनुः स्वकृतसेतुपरीप्सया यः
कालेऽदधत्स भगवान्मम केन तुष्येत् ॥ ३७॥

शब्दार्थ

यत्—जिसके; पाद—पैरों की; पङ्कज—कमल सदृश; रजः—धूलि; शिरसा—सिर पर; बिभर्ति—धारण करती है; श्रीः—लक्ष्मी; अब्ज-जः—कमल से जन्मे, ब्रह्माजी; स—सहित; गिरि-शः—कैलाश पर्वत के स्वामी, शिवजी; सह—सहित; लोक—लोकों के; पालैः—शासकों द्वारा; लीला—उनकी लीला के रूप में; तनुः—शरीर; स्व—अपने से; कृत—उत्पन्न; सेतु—धर्म-संहिता; परीप्सया—रक्षा करने की इच्छा से; यः—जिसने; काले—कालक्रम में; अदधत्—धारण किया; सः—वह; भगवान्—भगवान्; मम—मुझसे; केन—किस प्रकार से; तुष्येत्—प्रसन्न हो सकेंगे।

''देवी लक्ष्मी, ब्रह्मा, शिव तथा विभिन्न लोकों के शासक उनके चरणकमलों की धूलि को अपने सिरों पर चढ़ाते हैं और जो अपने द्वारा निर्मित धर्म-संहिता की रक्षा के लिए विभिन्न कालों में लीलावतार धारण करते हैं। भला वे भगवान् मुझ पर कैसे प्रसन्न हो सकेंगे?''

अर्चितं पुनरित्याह नारायण जगत्पते ।
आत्मानन्देन पूर्णस्य करवाणि किमल्पकः ॥ ३८ ॥

शब्दार्थ

अर्चितम्—पूजे जाने वाले को; पुनः—और भी; इति—इस प्रकार; आह—(राजा नग्नजित ने) कहा; नारायण—हे नारायण; जगत्—ब्रह्माण्ड के; पते—हे स्वामी; आत्म—अपने भीतर; आनन्देन—आनन्द के साथ; पूर्णस्य—जो पूर्ण है उसका; करवाणि—कर सकता हूँ; किम्—क्या; अल्पकः—तुच्छ।

सर्वप्रथम राजा नग्नजित ने भगवान् की समुचित पूजा की और तब उन्हें सम्बोधित किया, ''हे नारायण, हे ब्रह्माण्ड के स्वामी, आप अपने आध्यात्मिक आनन्द में पूर्ण रहते हैं। अतः यह तुच्छ व्यक्ति आपके लिए क्या कर सकता है?''

श्रीशुक उवाच
तमाह भगवान्हृष्टः कृतासनपरिग्रहः ।
मेघगम्भीरया वाचा सस्मितं कुरुनन्दन ॥ ३९ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—शुकदेव गोस्वामी ने कहा; तम्—उससे; आह—कहा; भगवान्—भगवान् ने; हृष्टः—प्रसन्न; कृत—किया हुआ; आसन—आसन; परिग्रहः—स्वीकृति; मेघ—बादल की तरह; गम्भीरया—गम्भीर; वाचा—वाणी में; स—सहित; स्मितम्—मन्द हँसी से; कुरु—कुरुओं के; नन्दन—हे प्रिय वंशज।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : हे कुरुनन्दन, भगवान् प्रसन्न थे और सुविधाजनक आसन स्वीकार करके वे मुसकाये तथा मेघ-गर्जना सदृश धीर-गम्भीर वाणी में राजा से बोले।

श्रीभगवानुवाच
नरेन्द्र याच्ञा कविभिर्विगर्हिता
राजन्यबन्धोर्निजधर्मवर्तिनः ।
तथापि याचे तव सौहृदेच्छया
कन्यां त्वदीयां न हि शुल्कदा वयम् ॥ ४० ॥

शब्दार्थ

श्री-भगवान् उवाच—भगवान् ने कहा; नर-इन्द्र—हे मनुष्यों के शासक; याच्ञा—माँगना; कविभिः—विद्वानों द्वारा; विगर्हिता—निन्दनीय; राजन्य—राजवर्ग के; बन्धोः—सदस्य के लिए; निज—अपने; धर्म—धार्मिक मानदण्ड में; वर्तिनः—स्थित; तथा अपि—तो भी; याचे—मैं माँग रहा हूँ; तव—तुमसे; सौहृद—मैत्री की; इच्छया—इच्छा से; कन्याम्—कन्या; त्वदीयाम्—तुम्हारी; न—नहीं; हि—निस्सन्देह; शुल्क-दाः—कर देने वाले; वयम्—हम।

भगवान् ने कहा : हे मनुष्यों के शासक, विद्वानजन धर्म में रत राजवर्य व्यक्ति से याचना करने की निन्दा करते हैं। तो भी, तुम्हारी मित्रता का इच्छुक मैं तुमसे तुम्हारी कन्या को माँग रहा हूँ यद्यपि हम बदले में कोई भेंट नहीं दे रहे।

श्रीराजोवाच
कोऽन्यस्तेऽभ्यधिको नाथ कन्यावर इहेप्सितः ।
गुणैकधाम्नो यस्याङ्गे श्रीर्वसत्यनपायिनी ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ

श्री-राजा उवाच—राजा नग्नजित ने कहा; कः—कौन; अन्यः—दूसरा; ते—तुमसे; अभ्यधिकः—श्रेष्ठ; नाथ—हे स्वामी; कन्या—मेरी कन्या के लिए; वरः—दूल्हा; इह—इस संसार में; ईप्सितः—इच्छित; गुण—दिव्य गुणों का; एक—एकमात्र; धाम्नः—धाम; यस्य—जिसके; अङ्गे—शरीर में; श्रीः—लक्ष्मी; वसति—वास करती है; अनपायिनी—कभी न छोड़ने वाली।

राजा ने कहा : हे प्रभु, भला मेरी पुत्री के लिए आपसे बढ़कर और कौन वर हो सकता है? आप सभी दिव्य गुणों के धाम हैं। आपके शरीर पर साक्षात् लक्ष्मी निवास करती हैं और वे

किसी भी कारण से आपको कभी नहीं छोड़तीं।

किन्त्वस्माभि: कृत: पूर्वं समय: सात्वतर्षभ ।
पुंसां वीर्यपरीक्षार्थं कन्यावरपरीप्सया ॥ ४२ ॥

शब्दार्थ

किन्तु—लेकिन; अस्माभि:—हमारे (परिवार के) द्वारा; कृत:—बनाया; पूर्वम्—पहले की; समय:—प्रतिज्ञा; सात्वत-ऋषभ—हे सात्वतों के प्रमुख; पुंसाम्—मनुष्यों का (जो यहाँ आये हैं); वीर्य—पराक्रम; परीक्षा—परीक्षा के; अर्थम्—हेतु; कन्या—मेरी पुत्री के लिए; वर—दूल्हा, पति; परीप्सया—खोजने की इच्छा से।

किन्तु हे सात्वत-प्रमुख, अपनी पुत्री के लिए उपयुक्त पति सुनिश्चित करने के लिए हमने उसके संभावित वरों के पराक्रम की परीक्षा करने के लिए पहले से ही एक शर्त निश्चित की हुई है।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती के अनुसार राजा द्वारा परीक्षा रखने का वास्तविक उद्देश्य श्रीकृष्ण को दामाद रूप में प्राप्त करना था क्योंकि एकमात्र वे ही बैलों को वश में कर सकते थे। ऐसी परीक्षा लिए बिना अपनी पुत्री के पाणिग्रहण के निमित्त आये अनेक योग्य प्रतीत होने वाले राजकुमारों तथा राजाओं को मना कर पाना नग्नजित के लिए कठिन होता।

सप्तैते गोवृषा वीर दुर्दान्ता दुरवग्रहा: ।
एतैर्भग्ना: सुबहवो भिन्नगात्रा नृपात्मजा: ॥ ४३ ॥

शब्दार्थ

सप्त—सात; एते—ये; गो-वृषा:—बैल; वीर—हे वीर; दुर्दान्ता:—खूँखार; दुरवग्रहा:—अखंड; एतै:—उनके द्वारा; भग्ना:—पराजित; सु-बहव:—अनेकानेक; भिन्न—टूटे; गात्रा:—अंगों वाले; नृप—राजाओं के; आत्म-जा:—पुत्र।

हे वीर, इन सातों खूँखार बैलों को वश में करना असम्भव है। इन्होंने (इन बैलों ने) अनेक राजकुमारों के अंगों को खण्डित करके उन्हें परास्त किया है।

यदिमे निगृहीता: स्युस्त्वयैव यदुनन्दन ।
वरो भवानभिमतो दुहितुर्मे श्रिय:पते ॥ ४४ ॥

शब्दार्थ

यत्—यदि; इमे—वे; निगृहीता:—वशीभूत; स्यु:—हो जाते हैं; त्वया—तुम्हारे द्वारा; एव—निस्सन्देह; यदु-नन्दन—हे यदुवंशी; वर:—दूल्हा; भवान्—आप; अभिमत:—स्वीकृत, अभीष्ट; दुहितु:—पुत्री के लिए; मे—मेरी; श्रिय:—लक्ष्मी के; पते—हे पति।

हे यदुवंशी, यदि आप इन्हें वश में कर लें तो निश्चित रूप से, हे श्रीपति, आप ही मेरी पुत्री

के उपयुक्त वर होंगे।

एवं समयमाकर्ण्य बद्ध्वा परिकरं प्रभुः ।
आत्मानं सप्तधा कृत्वा न्यगृह्णाल्लीलयैव तान् ॥ ४५ ॥

शब्दार्थ

एवम्—इस प्रकार; समयम्—शर्त, प्रतिज्ञा; आकर्ण्य—सुनकर; बद्ध्वा—कस कर; परिकरम्—अपने वस्त्र; प्रभुः—प्रभु; आत्मानम्—अपने को; सप्तधा—सात रूप; कृत्वा—करके; न्यगृह्णात्—वश में कर लिया; लीलया—खेल खेल में; एव—केवल; तान्—उनको।

इन शर्तों को सुनकर भगवान् ने अपने वस्त्र कसे, अपने आपको सात रूपों में विस्तारित किया और बड़ी आसानी से बैलों को वश में कर लिया।

तात्पर्य : श्रील श्रीधर स्वामी के अनुसार भगवान् कृष्ण ने अपने को सात रूपों में न केवल सात बैलों को खेल खेल में हराने के लिए विस्तारित किया अपितु राजकुमारी सत्या को यह दिखाने के लिए भी कि उसे उनकी अन्य रानियों से होड़ नहीं लेनी होगी क्योंकि वे सबों से एकसाथ केलि कर सकते हैं।

बद्ध्वा तान्दामभिः शौरिर्भग्नदर्पान्हतौजसः ।
व्यकर्षल्लीलया बद्धान्बालो दारुमयान्यथा ॥ ४६ ॥

शब्दार्थ

बद्ध्वा—बाँध कर; तान्—उनको; दामभिः—रस्सियों से; शौरिः—भगवान् कृष्ण ने; भग्न—खण्डित; दर्पान्—घमंड; हत—विनष्ट; ओजसः—पराक्रम; व्यकर्षत्—घसीटा; लीलया—खेल खेल में; बद्धान्—बँधे हुए; बालः—बालक; दारु—लकड़ी के; मयान्—बने; यथा—जिस तरह।

भगवान् शौरि ने उन बैलों को बाँध लिया जिनका घमंड तथा बल अब टूट चुका था और उन्हें रस्सियों से इस तरह खींचा जिस तरह कोई बालक खेल में लकड़ी के बने बैलों के खिलौनों को खींचता है।

ततः प्रीतः सुतां राजा ददौ कृष्णाय विस्मितः ।
तां प्रत्यगृह्णाद्भगवान्विधिवत्सदृशीं प्रभुः ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ

ततः—तब; प्रीतः—प्रसन्न; सुताम्—अपनी पुत्री को; राजा—राजा ने; ददौ—दे दिया; कृष्णाय—कृष्ण को; विस्मितः—चकित; ताम्—उसको; प्रत्यगृह्णात्—स्वीकार किया; भगवान्—परम पुरुष ने; विधि-वत्—वैदिक विधि के अनुसार; सदृशीम्—अनुरूप; प्रभुः—भगवान् के।

तब प्रसन्न तथा चकित राजा नग्नजित ने अपनी पुत्री भगवान् कृष्ण को भेंट कर दी।

भगवान् ने इस अनुरूप दुलहन को वैदिक विधि के साथ स्वीकार किया।

तात्पर्य : *सदृशीम्* शब्द सूचित करता है कि सुन्दर राजकुमारी भगवान् के उपयुक्त दुलहन थी क्योंकि उसमें वे अद्भुत दिव्य गुण थे, जो भगवान् के पूरक थे। जैसाकि श्रील जीव गोस्वामी ने इंगित किया है *विस्मित:* शब्द सूचित करता है कि राजा नग्नजित सचमुच अपने जीवन में इन अनेक सहसा घटित होने वोली असामान्य घटनाओं से चकित था।

राजपत्न्यश्च दुहितुः कृष्णं लब्ध्वा प्रियं पतिम् ।
लेभिरे परमानन्दं जातश्च परमोत्सवः ॥ ४८ ॥

शब्दार्थ

राज—राजा की; पत्न्यः—पत्नियाँ; च—तथा; दुहितुः—तथा उसकी पुत्री के; कृष्णम्—कृष्ण को; लब्ध्वा—प्राप्त करके; प्रियम्—प्रिय; पतिम्—पति; लेभिरे—अनुभव किया; परम—महानतम; आनन्दम्—आनन्द; जातः—उत्पन्न; च—तथा; परम—महानतम; उत्सवः—उत्सव।

राजकुमारी को भगवान् कृष्ण के प्रिय पति के रूप में प्राप्त होने पर राजा की पत्नियों को सर्वाधिक आनन्द प्राप्त हुआ और अतीव उत्सव का भाव जाग उठा।

शङ्खभेर्यानका नेदुर्गीतवाद्यद्विजाशिषः ।
नरा नार्यः प्रमुदिताः सुवासःस्त्रगलङ्कृताः ॥ ४९ ॥

शब्दार्थ

शङ्ख—शंख; भेरी—तुरही; आनकाः—तथा ढोल; नेदुः—बज उठे; गीत—गीत; वाद्य—वाद्य-संगीत; द्विज—ब्राह्मणों के; आशिषः—आशीर्वाद; नराः—मनुष्य; नार्यः—स्त्रियाँ; प्रमुदिताः—प्रसन्न; सु-वासः—सुन्दर वस्त्रों; स्त्रक्—तथा मालाओं से; अलङ्कृताः—सुसज्जित।

गीत तथा वाद्य संगीत और ब्राह्मणों द्वारा आशीर्वाद देने की ध्वनियों के साथ साथ शंख, तुरही तथा ढोल बजने लगे। प्रमुदित नर-नारियों ने अपने को सुन्दर वस्त्रों तथा मालाओं से अलंकृत किया।

दशधेनुसहस्राणि पारिबर्हमदाद्विभुः ।
युवतीनां त्रिसाहस्रं निष्कग्रीवसुवाससम् ॥ ५० ॥
नवनागसहस्राणि नागाच्छतगुणान्रथान् ।
रथाच्छतगुणानश्वानश्वाच्छतगुणान्नरान् ॥ ५१ ॥

शब्दार्थ

दश—दस; धेनु—गायों का; सहस्राणि—हजार; पारिबर्हम्—दहेज; अदात्—दिया; विभुः—शक्तिशाली (राजा नग्नजित); युवतीनाम्—युवतियों के; त्रि-साहस्रम्—तीन हजार; निष्क—सुनहरे आभूषण; ग्रीव—गर्दन में; सु—उत्तम; वाससम्—वस्त्र; नव—नौ; नाग—हाथियों का; सहस्राणि—हजार; नागात्—हाथियों की अपेक्षा; शत-गुणान्—सौ गुना अधिक (९,००,०००); रथान्—रथ; रथात्—रथों से; शत-गुणान्—सौ गुना अधिक; अश्वान्—घोड़े; अश्वात्—अश्वों की तुलना में; शत-गुणान्—एक सौ गुना अधिक (९ अरब); नरान्—मनुष्यों को।.

शक्तिशाली राजा नग्नजित ने दहेज के रूप में दस हजार गौवें, तीन हजार युवा-दासियाँ जो अपने गलों में सोने के आभूषण पहने थीं तथा सुन्दर वस्त्रों से अलंकृत थीं, नौ हजार हाथी, हाथियों के एक सौ गुना रथ, रथों के एक सौ गुना घोड़े तथा घोड़ों के सौ गुने नौकर दिये।

दम्पती रथमारोप्य महत्या सेनया वृतौ ।
स्नेहप्रक्लिन्नहृदयो यापयामास कोशलः ॥ ५२ ॥

शब्दार्थ

दम्-पती—जोड़ी; रथम्—रथ पर; आरोप्य—बैठाकर; महत्या—विशाल; सेनया—सेना से; वृतौ—युक्त; स्नेह—स्नेह से; प्रक्लिन्न—द्रवित; हृदयः—हृदय वाला; यापयाम् आस—विदा किया; कोशलः—कोशल के राजा ने।.

स्नेह से द्रवीभूत हृदय से, कोशल के राजा ने वर-वधू को उनके रथ पर बैठा दिया और तब एक विशाल सेना के साथ उन्हें विदा कर दिया।

श्रुत्वैतद्रुरुधुर्भूपा नयन्तं पथि कन्यकाम् ।
भग्नवीर्याः सुदुर्मर्षा यदुभिर्गोवृषैः पुरा ॥ ५३ ॥

शब्दार्थ

श्रुत्वा—सुनकर; एतत्—यह; रुरुधुः—रोक दिया; भू-पाः—राजाओं ने; नयन्तम्—ले जा रहे; पथि—रास्ते में; कन्यकाम्—दुलहन को; भग्न—खण्डित; वीर्याः—शक्ति वाले; सु—अत्यन्त; दुर्मर्षाः—असहिष्णु; यदुभिः—यदुओं द्वारा; गो-वृषैः—बैलों से; पुरा—पहले।.

जब स्वयंवर में आये असहिष्णु प्रतिद्वन्द्वी राजाओं ने सारी घटना के बारे में सुना तो उन्होंने भगवान् कृष्ण को, अपनी दुलहन घर ले जाते समय मार्ग में रोकना चाहा। किन्तु जिस तरह इसके पूर्व बैलों ने राजाओं के बल को तोड़ दिया था उसी तरह अब यदु-योद्धाओं ने उनके बल को तोड़ दिया।

तानस्यतः शरव्रातान्बन्धुप्रियकृदर्जुनः ।
गाण्डीवी कालयामास सिंहः क्षुद्रमृगानिव ॥ ५४ ॥

शब्दार्थ

तान्—उनको; अस्यतः—फेंकते हुए; शर—बाणों के; व्रातान्—झुंड के झुंड; बन्धु—उसके मित्र (श्रीकृष्ण); प्रिय—प्रसन्न करने के लिए; कृत्—करते हुए; अर्जुनः—अर्जुन ने; गण्डीवी—गाण्डीव धनुष का स्वामी; कालयाम् आस—भगा दिया; सिंहः—सिंह; क्षुद्र—तुच्छ; मृगान्—पशुओं को; इव—जिस तरह।

गाण्डीव धनुर्धारी अर्जुन अपने मित्र कृष्ण को प्रसन्न करने के लिए सदैव उत्सुक रहते थे अतः उन्होंने उन सारे प्रतिद्वन्द्वियों को भगा दिया जो भगवान् पर बाणों की झड़ी लगाये हुए थे। उन्होंने यह सब वैसे ही किया जिस तरह एक सिंह क्षुद्र पशुओं को खदेड़ देता है।

पारिबर्हमुपागृह्य द्वारकामेत्य सत्यया ।
रेमे यदूनामृषभो भगवान्देवकीसुतः ॥ ५५ ॥

शब्दार्थ

पारिबर्हम्—दहेज; उपागृह्य—लेकर; द्वारकाम्—द्वारका में; एत्य—आकर; सत्यया—सत्या के साथ; रेमे—विलास किया; यदूनाम्—यदुओं के; ऋषभः—प्रमुख; भगवान्—भगवान्; देवकी-सुतः—देवकी-पुत्र ने।

तब यदुओं के प्रधान भगवान् देवकीसुत दहेज तथा सत्या को लेकर द्वारका गये और वहाँ सुखपूर्वक रहने लगे।

श्रुतकीर्तेः सुतां भद्रां उपयेमे पितृष्वसुः ।
कैकेयीं भ्रातृभिर्दत्तां कृष्णः सन्तर्दनादिभिः ॥ ५६ ॥

शब्दार्थ

श्रुतकीर्तेः—श्रुतकीर्ति की; सुताम्—पुत्री; भद्राम्—भद्रा को; उपयेमे—ब्याहा; पितृ-स्वसुः—अपने पिता की बहन की; कैकेयीम्—कैकेय की राजकुमारी; भ्रातृभिः—उसके भाइयों द्वारा; दत्ताम्—दी हुई; कृष्णः—कृष्ण; सन्तर्दन-आदिभिः—सन्तर्दन इत्यादि द्वारा।

भद्रा कैकेय राज्य की राजकुमारी तथा कृष्ण की बुआ श्रुतकीर्ति की पुत्री थी। जब सन्तर्दन इत्यादि उसके भाइयों ने उसे कृष्ण को भेंट किया, तो उन्होंने भद्रा से विवाह कर लिया।

सुतां च मद्राधिपतेर्लक्ष्मणां लक्षणैर्यताम् ।
स्वयंवरे जहारैकः स सुपर्णः सुधामिव ॥ ५७ ॥

शब्दार्थ

सुताम्—पुत्री को; च—तथा; मद्र-अधिपतेः—मद्र देश के शासक की; लक्ष्मणाम्—लक्ष्मणा को; लक्षणैः—सारे सद्गुणों से; युताम्—युक्त; स्वयम्-वरे—स्वयंवर उत्सव में; जहार—हर ले गया; एकः—अकेले; सः—वह, कृष्ण; सुपर्णः—गरुड़; सुधाम्—अमृत को; इव—जिस तरह।

तब भगवान् ने मद्रराज की कन्या लक्ष्मणा से विवाह किया। कृष्ण अकेले ही उसके स्वयंवर समारोह में गये थे और उसे उसी तरह हर ले आये जिस तरह गरुड़ ने एक बार देवताओं का अमृत चुरा ले गया था।

अन्याश्चैवंविधा भार्याः कृष्णस्यासन्सहस्रशः ।
भौमं हत्वा तन्निरोधादाहृताश्चारुदर्शनाः ॥ ५८ ॥

शब्दार्थ

अन्याः—अन्य; च—तथा; एवम्-विधाः—इन्हीं की तरह; भार्याः—पत्नियाँ; कृष्णस्य—कृष्ण की; आसन्—हुईं; सहस्रशः—हजारों; भौमम्—भौम असुर को; हत्वा—मार कर; तत्—उस भौम से; निरोधात्—उनके बन्दीगृह से; आहृताः—हरण की गई; चारु—सुन्दर; दर्शनाः—जिनकी सूरत।

भगवान् कृष्ण ने इन्हीं के समान अन्य हजारों पत्नियाँ तब प्राप्त कीं जब उन्होंने भौमासुर को मारा और उसके द्वारा बन्दी बनाई गई सुन्दरियों को छुड़ाया।

इस प्रकार श्रीमद्भागवत के दसवें स्कंध के अन्तर्गत ''श्रीकृष्ण का पाँच राजकुमारियों से ब्याह'' नामक अट्ठावनवें अध्याय के श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के विनीत सेवकों द्वारा रचित तात्पर्य पूर्ण हुए।